P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-6* February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

आधुनिक भारतीय कला में समीक्षावादी प्रवृत्ति एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

बरखा रानी
असिस्टैंट प्रोफेसर,
कला विभाग,
आई0आई0एम0टी0 कॉलेज,
अलीगढ़, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

आधुनिक चित्रकला में समय–समय पर अनेक नवीन प्रवृत्तियों का उदय हुआ है। इनमें से अधिकांश प्रवृत्तियां यूरोपीय देशों में आरम्भ होकर विश्व के अन्य देशों में फैली हैं। इस प्रकार आधुनिक चित्रकला के विश्व–पटल पर यूरोपीय कला का प्रधान प्रभाव परिलक्षित होता है। यद्यपि इन कला–आन्दोलनों में आदिम कला, लोक कला, बाल कला तथ विश्व के प्राचीन देशों (जैसे मिस्र, चीन, जापान, भारत तथा ईरान) की कला की विशेषताओं को भी आत्मसात् करने का प्रयत्न हुआ है तथापि मूल स्वर यूरोपीय आधुनिक चिन्तन–धारा का ही रहा है जिस पर विज्ञान तथा तकनीक की उपलब्धियों का दृष्टिकोंण प्रभावी है। अन्य देशों के समान भारत में भी यूरोपीय आधुनिक कला आन्दोलनों के अनुकर्ता इस दौड़ की अग्रपंक्ति में रहे हैं। कुछ समय तक तो भारत में ऊपर से थोपी गयी जैसी प्रतीत होती है, क्योंकि भारत की परिस्थितियां यूरोप से पर्याप्त भिन्न रही हैं और यहां पर विश्व युद्धों तथा विज्ञान द्वारा अविष्कृत विनाशकारी उपकरणें, तकनीकी विकास तथा औद्योगिक क्रान्ति के परिणाम–स्वरूप सामाजिक विकृतियों तथा कुण्ठाओं का यूरोप जैसा प्रसार नहीं हुआ है, परन्तु बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारत के औद्योगिक जगत् में यूरोप जैसी परिस्थितियां उत्पन्न होने लगीं, साथ ही पड़ौसी देशों से युद्ध और विश्व के शक्ति–सन्तुलन की राजनीतिक परिस्थितियों में परिवर्तन से भारतीय जन–मानस भी बहुत उद्वेलित हुआ है। फिर भी यूरोपीय तथा भारतीय समाज में व्यापक विभिन्नताएं विद्यमान हैं।

मुख्य शब्द : आधुनिक चित्रकला, समीक्षावादी प्रवृत्ति, विश्लेषणात्मक अध्ययन।

प्रस्तावना

कलाकार किसी देश के समाज, धर्म, संस्कृति तथा राजनीति आदि से प्रभावित होते हैं। उनकी विचारधारा, कला के विषयों और अंकन पद्धति पर इनमें होने वाले परिवर्तनों का प्रभव पड़ता है। धर्म के संरक्षण में कलाओं ने ईश्वर और देवी–देवताओं की पूजा–अर्चना में सहयोग दिया। राज्य के संरक्षण में आश्रयदाताओं और सामन्तों का गुणगान किया। प्रजातन्त्र में भी यह परम्परा समाप्त नहीं हुई है, इतना अवश्य हैं कि अब कलाकारों पर पहले जैस अंकुश नहीं रहा है और वे विभिन्न सम्प्रदायों तथा समुदायों की आलेचना करने का साहस भी दिलाने लगे हैं।

कला, साहित्य तथ नाटक आदि में व्यंग्य के माध्यम से दोष–दर्शन अथवा अप्रत्यक्ष आलोचना सदैव ही की जाती रही है, परन्तु सीधे–सीधे किसी शक्तिशाली संस्था की आलोचना पिछले युगों में कोई भी नहीं कर पाता था। यह सब आधुनिक युग में ही संभव हुआ है। यूरोप का दादावादी आन्दोलन इसका सबल प्रमाण है। प्राचीन भरतीय चित्रकला में भी इसके उदाहरण नहीं मिलते हैं। भारत की आधुनिक चित्रकला में इस ओर बंगाल शैली से ही कुछ प्रयास आरम्भ हो गये थे। स्व0 गगनेन्द्रनाथ ठाकुर इस प्रकार के कलाकारों में मूर्धन्य रहे हैं, परन्तु उनकी सामाजिक–राजनीतिक व्यंग्य की कृतियों में पीड़ा की गहराई नहीं है। भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व की कला–कृतियों में सामाजिक–राजनीतिक चरित्र–भ्रष्टता को उजागर करने का प्रयत्न नहीं हुआ है। स्वतन्त्रता–प्राप्ति के पश्चात् भी पहले तो लोग बहुत समय तक स्वराज्य और सुराज्य की आशा के स्वप्न–जाल में खोये रहे, परन्तु समय व्यतीत होने के साथ–साथ जैसे–जैसे सुराज्य का भ्रम–जाल टूटता गया, वैसे–वैसे लोगों का असन्तोष बढ़ता गया। पत्रिकाओं के व्यंग्य–चित्रों में इस सबका बहुत अंकन किया जाता रहा तथापि इस प्रकार के एक सशक्त कला–आन्दोलन का उद्भव बहुत बाद में हुआ।

अध्ययन का उद्देश्य

भारतीय चित्रकार शैलीगत प्रयोगों के मायाजाल में उलझे रहे। आधुनिक यूरोपीय कला–प्रत्तियों तथा भारत की प्राचीन शैलियों के समर्थन अथवा विरोध में ही अधिकाधिक दिलचस्पी दिखायी जाती रही। विषयों की दृष्टि से प्रायः परम्परागत धार्मिक घटनाओं अथवा सामाजिक जीवन के विषय–प्रसंगों के आधार पर ही चित्रांकन किया जाता रहा। लोक–जीवन के आकर्षक पक्षों की झांकी भी प्रस्तुत की गयी। परन्तु इस सबके साथ–साथ समाज की जो पीड़ा बढ़ रही थी उसकी अभिव्यक्ति करने वाला कोई आन्दोलन कलाकारों ने संगठित होकर आरम्भ नहीं किया था। इस कार्य को मूर्तरूप प्रदान किया ''समीक्षावाद'' ने, जिसे आधुनिक भरतीय चित्रकला का प्रथम सांस्कृतिक आन्दोलन कहा गया है।

उत्तर–प्रदेश में आधुनिक कला को आगे बढ़ाने के प्रयास से सम्बन्धित दो पक्ष हमारे सम्मुख आते हैं – एक पक्ष का दृष्टिकोंण प्रस्तुत करते हुए श्री सान्याल ने कहा था कि उत्तर प्रदेश में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में श्री के0एस0 कुलकर्णी के नेतृत्व और सुयोग्य निर्देशन में यह संस्था देश के अन्य प्रदेशों के समकक्ष ही आधुनिक कला में समय पाकर समुचित स्थान प्राप्त कर लेगी तथापि आधुनिक कला के कोमल पौधे को पनपने हेतु यहाँ बहुत अधिक उर्वरक की अवश्यकता है। लख्नऊ में दिनकर कौशिक तथा रणवीर सिंह बिष्ट इस दिशा में आशाप्रद भविष्य के सूचक हैं। दूसरा पक्ष प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल का है जिनके मतानुसार यहाँ की मिट्टी में यहीं की कला का पौधा पल्लवित, पुष्पित एवं फलित हो सकता है – उक्त दोनों ही पक्षों के कलाकार अपने–अपने प्रयोगों को आगे बढ़ा रहे हैं। प्रथम पक्ष अन्तर्राष्ट्रीय प्रवृत्ति का हामी है। प्रो0 रणवीर सिंह विष्ट ने कहा था कि यद्यपि नये आन्दोलन अलग–अलग देशों, अलग–अलग संस्कृतियों में अलग रूप ले रहे हैं लेकिन उनमें एक चीज समान है, और वह है अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृति, जहाँ कलाकार ने सम्पूर्ण स्वतंत्रता की आवाज उठायी है, साथ ही उसने अपने ऊपर एक बहुत बड़ा दायित्व भी ले लिया है। वास्तविकता यह है कि कहीं न कहीं पर सामूकि और व्यक्तिगत अनुभव दोनों मिलकर कलात्मक स्वभाव को प्रस्फुटित करते हैं।

1960 के पश्चात् जो कलात्मक गतिविधियाँ चलीं उनकी परिणति एक नये कला आन्दोलन के बीजारोपण के रूप में हुई जिसे 'समीक्षवाद' कहा जाता है। वर्ष 1972 के एक लेख में वाराणसी के प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल ने इस विचार को सामने रखा था कि आधुनिक भारतीय कला में इस प्रकार के प्रयोग होने चाहिए जिनमें अपने देश की ही भाव भूमि (मिट्टी) हो, और अपने देश का ही पौधा (आकार) हो।

इसी मध्य श्री वार्ष्णेय महाविद्यालय, अलीगढ़ के ललित कला विभागाध्यक्ष प्रो0 मधुकर के हस्ताक्षरों से 15 नवम्बर, 1973 को इस आन्दोलन का घोषणा पत्र प्रचारित हुआ। इसके एक महीने पश्चात् 15 दिसम्बर, 1973 को एक पत्रक भी प्रसारित हुआ जिसमें प्रो0 मधुकर (अलीगढ़), प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल (वाराणसी) तथा बालादत्त पाण्डे (इलाहाबाद) के नाम उल्लिखित हैं।

इस प्रकार मुख्यतः अलीगढ़, इलाहाबाद तथा वाराणसी के कलाकारों का जो विचार–मन्थन चला उसके फलस्वरूप एक नये आन्दोलन 'समीक्षावाद' का बीजारोपण हुआ। वर्ष 1979 से इसकी प्रदर्शनियाँ आयोजित होनी आरम्भ हुई।

उपकल्पना

कलाकार समाज में ही रहता है। उसका और उसकी कला का समाज से अविछिन्न सम्बन्ध हैं। समाज से ही उसे कला–सजृन हेतु प्रेरणा, विषय तथा रचना–सामग्री उपलब्ध होती है, अतः अपनी अनुभूतियों तथा कल्पनाओं से सामाजिक अनुभूतियों तथा कल्पनाओं का तादात्म्य करके जब कृतियाँ बनाता है तो समाज कलाकार तथा कलाकृति दोनों को ही पूरे मन से ग्रहण करता है। आधुनिक कला की अन्य शैलियों में यह बात नहीं है इसलिए उनकी पैंठ समग्र समाज में नहीं है। समीक्षावादी कलाकारों ने विषय वस्तु, शैली तकनीक–सभी दृष्टियों से सामाजिक–सापेक्षता को ध्यान में रखा है और इस प्रकार अब तक कलाकार तथा समाज के मध्य जो दूरी थी, उस खाई को पाटने का प्रयत्न होगा।

शोध अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व

विषय प्रधान चित्रों में विविध प्रकार के विषयों को चित्रित किया जाता है जिनमें मुख्य रूप से राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक विषय का स्थान रहता है। इनमें भी ऐतिहासिक दृष्टि से धार्मिक विषयों की प्रधानता रही है। मनुष्य आरम्भ से ही प्राकृतिक शक्तियों से डरता आया है और इसी डर से उसने प्रकृति की विभिन्न शक्तियों के काल्पनिक रूप बनाकर उनकी पूजा–उपासना की है। संसार का कोई भी ऐसा देश नहीं है जहाँ धर्म के आधार पर अधिकांश कृतियाँ न बनी हों।

राजनीतिक दृष्टि से यह दुनियाँ पूँजीवादी एवं साम्यवादी अथवा अमेरिकी एवं रूसी गुटों के अतिरिक्त तटस्थ गुट के रूप में तीन–ध्रुवों में बँटी है। तटस्थ गुट को तीसरे विश्व के देश भी कहा जाता है जिसमें अधिकांश विकासशील देश है जहाँ अभी तक बहुत गरीबी रही है। विकसित देश इन पर किसी न किसी रूप में अपना अधिकार बनाये रखना चाहते हैं। संसार के कुछ भागों में राजनीतिक शक्ति–गुटों से मुक्त होने के प्रयत्न भी चल रहे हैं। इन्हें दबाने का प्रयत्न भी किया जाता है।

संसार में इस प्रकार की स्थितियों में थोड़े–थोड़े समय के अन्तराल से छोटे अथवा बड़े युद्ध भी हुए हैं। इन युद्धों की विभीषिका से त्रस्त मानव जाति के अन्धकारमय भविष्य, घोर निराशा और आतंकवाद का वातावरण दुनियाँ के अनेक भागों में दिखयी दे रहा है।

देश की आन्तरिक और बाह्य राजनीतिक परिस्थितियों ने सभी क्षेत्रों के बुद्धि जीवियों के मन में हलचल उत्पन्न की है। कवि नाटककार, कथाकार, फिल्मकार आदि के साथ ही चित्रकार भी इन परिस्थितियों से विचलित हुए हैं और उनके विरूद्ध अपना स्वर ऊँचा किया है।

समीक्षावादी चित्रकारों ने भारतवर्ष की आन्तरिक और बाह्य राजनीतिक परिस्थितियों के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की हैं तथा सत्ता प्राप्ति के लिए अन्य देशों की भूमि पर आक्रमण करने और युद्ध के पश्चात् होने वाले भयंकर विनाश को प्रतीक रूप में दिखाया है, दूसरों के संसाधनों तथा सम्पत्ति के लालचों, युद्ध–पिपासु देशों को चेतावनी दी है।

शोध अध्ययन की परिकल्पनाएँ

सन् 1947 में भारत स्वतन्त्र होने से पूर्व तक कुछ प्रदेशों में स्थानीय शैलियों की परम्पराएँ चल रही थीं जैसे बंगाल की पटुआ कला तथा कालीघाट की पटचित्र शैली, उड़ीसा के पटचित्र, नाथ द्वारा के पटचित्र, तंजौर शैली के चित्र, मधुबनी चित्र, महाराष्ट्र की वर्ली चित्र कला आदि। इनके अतिरिक्त देशभर में क्षेत्रीय अथवा आंचलिक कला शैलियाँ भी चल रही थीं जिन्हें लोक कला के रूप में पहचाना जाता है। देश के कई प्रान्तों में मुगल शैली की निर्जीव अनुकृति भी चल रही थी। कुछ चित्रकार राजस्थानी अथवा मुगल शैली के साथ यूरोपीय तत्वों का मिश्रण भी कर रहे थे। बंगाल में ठाकुर परिवार के कुछ सदस्यों द्वारा जिनमें अवनीन्द्र नाथ ठाकुर मूर्धन्य थे, एक नयी शैली का सूत्रपात किया गया जिसे बंगाल शैली कहा जाता है। इसी के साथ आधुनिक युग में भारत में कला के पुनरूत्थान का प्रारम्भ माना जाता है।

शोध अध्ययन का सीमाकंन

उत्तर प्रदेश की चित्रकला के इतिहास में लखनऊ ललित कला महाविद्यालय का विशेष स्थान है। सन् 1911 ई0 में इसकी स्थापना की गयी। इसमें व्यावसायिक कला, वास्तुशिल्पीय मानचित्र–अंकन तथा रेखाचित्र अंकन, अश्म मुद्रण आदि की शिक्षा के साथ–साथ सुवर्ण एवं लौह की ढ़लाई, धातु शिल्प, काष्ठ–शिल्प, टेराकोटा मूर्तिशिल्प तथा औद्योगिक डिजाइनिंग की शिक्षा दी जाती थी। प्रथम प्रिंसिपल के रूप में श्री नेटहार्ड की नियुक्ति की गयी। 1925 में श्री असित कुमार हल्दार यहाँ के प्रिंसिपल बने जो अवनी बाबू के शिष्य थे। लखनऊ के कलाकारों की कलकत्ता, मैसूर, बम्बई, लाहौर, दिल्ली आदि में प्रदर्शनियाँ आयोजित होती थीं।

विकास के क्रम में नये चित्रकारों का उदय होता रहा है। देहरादून, इलाहाबाद, वाराणसी, अलीगढ़ और कानपुर में कला के नवीन क्रियाशील केन्द्र खुले।

समीक्षावाद का बीज वर्ष 1974 में ही रोपित हो गया था, यद्यपि यह अलग बात है कि इसकी प्रथम प्रदर्शनी 1979 में हुई। इसे भी आधुनिक कला का आन्दोलन माना जाता है।

समीक्षावादी कला की मुख्य विशेषताएँ

1. समकालीन जन भावनाओं की अभिव्यक्ति।
2. कथ्य की प्रधानता।
3. ध्वन्यात्मकता।
4. परम्परा तथा रूढ़ियों से मुक्ति।
5. नवीन प्रतीक सृजन।
6. शैली तथा तकनीक की स्वतन्त्रता।
7. कलाकार और समाज के मध्य की खाई को पाटने का प्रयत्न।
8. राष्ट्रीय विषयों का प्रधान महत्व।

सुझाव

पत्रिका – तूलिकाकंन

फरवरी 81, वर्ष 3, अंक 10

रिपोर्ट – विभा शुक्ला

विदेशी कलाकारों की दृष्टि में

समीक्षावादी प्रदर्शनी–देखने वालों में कई एक विदेशी कलाकार भी थे जिन्होंने खुले दिल से समीक्षावादी चित्रों के प्रति अपनी भावनाएँ व्यक्त कीं। न्यूयार्क, अमरीका के कलाकार श्री कालॉस मेनडेटा, उनकी पत्नी तथा कलाकार पुत्री गज़ल मेनडेटा समीक्षावादी चित्रों से इतने अधिक प्रभावित हुए कि स्वयं आकर कलाकारों से मिले और कहा कि यदि इन चित्रों की प्रदर्शनी न्यूयार्क में की जाये तो इसे विस्मयकारी सफलता मिल सकती है।

पी0के0 बाबला सेनापति उड़ीसा के राजघराने से सम्बन्ध रखते हैं। समीक्षावादी चित्रों को देखकर एक बार तो वे ठिठक गये, हतप्रभ हो गये, आक्रान्त हो गये, बे बोले–''जिस प्रकार के यथार्थ का कठोर चित्र निरूपण मैंने देखा, मैं तो अपने गजदन्त मीनार से बाहर फैंक दिया गया हूँ और उससे मैं दूर भागना चाहता हूँ''।

प्रतिक्रियाएँ

Kaligan Vee, P/O Karanghiyoar
(Via) Chavakkad, Distt.- Trichiyor, Kerla

KCK PANICKER - कला जीवन से परे नहीं है और कला और जीवन राजनीति से भी हैं आप लोग कला के माध्यम से जनता के साथ हैं। जहाँ जमुना–गंगा जैसी पवित्र नदियाँ हैं वहाँ ऐसे कलाकार का जन्म सहज सौभाग्य है। धन्यवाद स्वीकार कीजिए।

डॉ0 धर्मवीर भारती सम्पादक
'धर्मयुग' साप्ताहिक, बम्बई (6.11.80)

समीक्षावादी चित्रकारों में पाश्चात्य या अन्य शैलियों का अनुकरण करने के बजाय अपने भौतिक ढंग से समस्याओं को देखने तथा उन्हें चित्रित करने का साहस है।

श्री वीरेन्द्र कुमार जैन, सम्पादक
'नवनीत' हिन्दी डाइजेस्ट, बम्बई (6.11.80)

समीक्षावादी चित्रकारों ने मौजूदा भारतीय जीवन के जख्मों का जिस संकुलता, तीब्रता, महनता और कलात्मकता से बनावरित किया है, उसकी ईमानदारी और साक्षात्कारी वेदना को देखकर मैं स्तब्ध रह गया।

Shri Babu Rao Sadwelkar
Directorate of Art, Bombay (9.11.80)

Extremely refreshing experience to see this exhibition. Paintings are well conceived with political and social satire. These types of paintings deserve to remain in history to give an account of the people and their culture. My hearty congratulations to all the artists. I look forward to se many more interesting things from this group in future.

Shri Jiban Lal Bandyopadhyay
Editor, Satyajug, Calcutta (23.3.82)

In this auditorium I have witnessed many individual and group exhibitions. But this one organised by SAMIKSHAVAD is completely different in its message, colour and dimension. India needs

today this sort of bold social consciousness in its art and piantings. This exhibition depicts the true life and aspiration of millions of India. My best regard to the organizers and artists who have made this unique pro people exhibition such a grand success.

Further I consider this exhibition as a remarkable landmark of Indian unity and solidarity. Talented artists from other states who have brought the messages of human emancipation through their ideas and colours will be remembered for long by art loving people of Calcutta.

Lady Ranu Mookerjee
Chairman Academy of Fine Arts, Calcutta (25.03.82)

The current exhibition of 'Samikshawad' is most fascinating. It depicts the maturity of the painters, their deep involvement in their surroundings and the various reactions portrayed in their paintings. It is in many ways an educative exhibition, evocative of their emotions and obvservations. I hope they will come again and exhibit their forceful exhibition in our gallery.

Dr. Rajendra Bajpai
'Akar' No. 9. Year 3, 1980, Ujjain

Samikashavad is going to break the ice soon. Any one who has an insight into the art, would agree that it is not like one of the Indian prototypes of modern European art, for it despises the western art both in letter and spirit as evident from its manifesto. Nor does it intend to glorify Indian traditional art. Any one viewing the Samikshavadi art, would be fully convinced that the traditionalist or revivalist bias is altogether missing. Of course the movement does identify to the conditions operating in the modern Indian culture. Modern Indian culture and civilization remain exclusively its chief concern, pre-occupation and fountainhead of inspiration. It is a timely move to reconcile the contemporary spirit of India after years and years of estrangement. to sum up, the Samikshavadi artist has practically nothing to do with any of the ancient or modern movements of art, in the East or West. It had sprung up just with an original idea germinating and sprouting in the mind of its pioneer, which would make contemporary Indian Art once again a very powerful and effective medium of expression and communication. ..... "Samikshavad" would thus pilot the way to make contemporary Indian art a very potential force for the social intercourse in our daily life. "Samikshavad" has just responded to the call of the hour. Thanks God, contemporary painters have woke up at long-last from the prolonged slumber and become conscious once again of their social obligations and responsibilities. I hope this movement would be welcomed in our social, political and cultural circles and also among the general public. Artists subscribing to the ideology of the new school of pictorial allegorical expressions should leave their strong impact on the cross-currents of contemporary Indian art.

'Evening News' of India, November 6, 1980, Bombay

A group of painters, mainly from Uttar Pradesh, seeking to launch an Indigecous movement of contemporary art' to stress social and economic injustice in the country.

The exhibition is worht a visit, at least to realise the legitimate anger among thinking people. There is the feeling that the public at large may feel happy with the work of the Samikshavadi group.

'The Times of India', November 5, 1980, Bomaby

There is a real horror in the form of paintings by eight artists from Varanasi adhering to the cult of Samikshavad'. This philosophy is 'opposed to the tendency of Indian artists following Western trends in modern art'. Its manifesto rejects 'individualism, the idea of confused creativity, technique as an end in itself etc.'. There is a show which has got to be seen in order to be believed.

निष्कर्ष

भारतवर्ष में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् पुनः पाश्चात्य आधुनिक कला का प्रचार–प्रसार बहुत तेजी से होने लगा जितना उसके पूर्व नहीं था। फलस्वरूप भारतीय कला की अस्मिता को खतरा उत्पन्न हो गया। देश के सभी ललित कला विद्यालय, राज्यों की ललित कला अकादमियाँ राष्ट्रीय ललित कला अकादमी, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय तथा अधिकांश सरकारी तथा निजी संस्थायें मात्र पाश्चात्य कला के आधुनिक आन्दोलनों के प्रचार–प्रसार का साधन बन कर रह गयी हैं। देश में आधुनिक भारतीय चित्रकला के नम पर पाश्चात्य आधुनिक कला की विविध शैलियों के भारतीय संस्करण ही देखने को मिल रहे है। इनमें जो कला उपस्थित हुई हैं, वह न तो देशवासियों का हित–साधन कर पा रही है और न विदेशों में ही उसे कोई सम्मान प्राप्त हो सका है। ऐसे दुरूह किस्म के चित्र बन रहे हैं जो न तो कलाकारों के पल्ले पड़ते हैं न दर्शकों के। मात्र झूँठे अखबारी प्रचार के बल पर उसे जीवित रखने का प्रयास हो रहा है। साधारण जन से तो उसका कोई ताल्लुक है ही नहीं। प्रबुद्ध वर्ग भी उससे जुड़ नहीं पाता। इस प्रकार मात्र पश्चिम की नकल करने के अलाव हमारे कलाकारों के पास कोई अपना रास्ता नहीं है। सम्पूर्ण भारतीय कलाकार–वर्ग एक ऐसी अन्धी गली में पहुँच गया है जहाँ से आगे का रास्ता ही नहीं सूझता।

इस परिस्थिति से अब तक उत्तर–प्रदेश के कुछ जागरूक कलाकारों ने 'समीक्षावाद' के नाम एक भारतीय आधुनिक कला शैली का आन्दोलन आरम्भ किया। इसका वैसा ही महत्व है जैसा बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में स्वतन्त्रता से पूर्व बंगाल शैली का था। समीक्षावाद ने खुलकर पाश्चात्य आधुनिक कला के अतिशय प्रभाव के विरूद्ध आवाज उठायी है और भारत में एक स्वदेश आधुनिक कला शैली का श्री गणेश किया है।

समीक्षावादी चित्रकार अपने उद्देश्य में अकेल समूह नहीं, अन्य अनेक कलाकार भी इस प्रकार की कृतियों के सृजन में लगे रहे हैं और लगे हुए हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

अविनाश बहादुर वर्मा : भारतीय चित्रकला का इतिहास प्रकाश बुक डिपो, बड़ा बाजार, बरेली, 1984

अशोक : कला सौन्दर्य और समीक्षाशास्त्र, संजय प्रकाश आगरा, 2003 संस्करण

(डॉ0) एस.बी.एल. सक्सैना : भारतीय चित्रकला–परम्परा और आधुनिकता का अन्तर्द्वन्द, तथा आनन्द लखटकिया, प्रकाशक सरन प्रकाशन, 40 नेहरू पार्क बरेली 2003

कृष्ण दत्त बाजपेयी : उत्तर प्रदेश के सांस्कृतिक केन्द्र–मथुरा, प्र0शिक्षा विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ–1955

कान्तिचन्द्र पाण्डेय : स्वतन्त्र कला शास्त्र, चौखम्भा संस्कृत सीरीज, ऑफिस, वाराणसी, 1959

कान्तिचन्द्र सोनरेक्सा : स्मारिका, स्वतंत्रता रजत जयन्ती 1972, प्र.उत्तर प्रदेश राज्य ललित कला अकामी, लखनऊ 1972

डॉ. गिर्राज किशोर अग्रवाल :आधुनिक यूरोपीय चित्रकला, ललित कला प्रकाशन, अलीगढ़, चतुर्थ संस्करण

डॉ. गिर्राज किशोर अग्रवाल : कला समीक्षा, प्र. देवऋषि प्रकाशन, पक्की सराय–अलीगढ़ 1970

डॉ. गिर्राज किशोर अग्रवाल : कला निबन्ध ललित कला प्रकाश, अलीगढ़ 1989

डॉ. गिर्राज किशोर अग्रवाल : कला और कलम, प्र. अशोक प्रकाश मन्दिर, अलीगढ़, 2005 संस्करण

डॉ. गिर्राज किशोर अग्रवाल : आधुनिक भारतीय चित्रकला, प्र. संजय प्रकाशन आगरा, तृतीय संस्करण

गोपाल मधुकर चतुर्वेदी : आधुनिक चित्रकला, देवऋषि प्रकाशन अलीगढ़ 1966

गोपाल मधुकर चतुर्वेदी : भारतीय चित्रकला–ऐतिहासिक सन्दर्भ, जाग्रति प्रकाशन, अचल रोड़, अलीगढ़, 1982

नीहार रंजन राय : भारतीय कला के आयाम

पी.एन. मागो : राष्ट्रीय समकालीन कला का प्रदर्शन, 1991, प्र. राष्टीय आधुकिनक कला संग्रहालय, नई दिल्ली, 1991

मदन मोहन नागर : पुरातत्व संग्रहालय मथुरा की परिचय पुस्तक, प्र. सुपरिन्टेण्डेण्ट प्रिटिंग व स्टेशनरी, संयुक्त प्रान्त, इलाहाबाद 1947

रामानन्द राठी : कला के सरोकार रचना प्रकाशन जयपुर, 1985

र.वि.साखलकर : आधुनिक चित्रकला का इतिास, प्र. राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर, 1985

राय कृष्ण दास : भारत की चित्रकला, भारत भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1960

रामचन्द्र शुक्ल : आधुनिक कला–समीक्षावाद प्रकाशकः कला प्रकाशन, 17 नया बैरहाना, इलाहाबाद–211003